जम्बू से जम्बूस्वामी

कथानक

(तत्त्वज्ञानपरक एवं वैराग्यवर्द्धक संवाद)

लेखक :

अध्यात्मरत्नाकर पण्डित रतनचन्द भारिल्ल

शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड़

प्राचार्य ह्न श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय, जयपुर

प्रकाशक :

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015

फोन : 0141-2707458, 2705581

□□□□□□ : □□□□□□□□□□□@□□□□□□.□□□

प्रथम संस्करण हिन्दी **:** २,००० हजार
जम्बूस्वामी पंचकल्याणक
प्रतिष्ठा महोत्सव
(५ फरवरी, २००८)
द्वितीय संस्करण : ३,००० हजार
(१५ मई, २००८)

मूल्य : **६ रुपये**

लैजर टाइपसैटिंग :
त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स,
ए-४, बापूनगर, जयपुर

मुद्रक
प्रिन्ट 'औ' लैण्ड
बाईस गोदाम, जयपुर

प्रकाशकीय

सिद्धान्तसूरि, शिक्षारत्न अध्यात्म रत्नाकर, सारस्वत मनीषी आदि अनेक उपाधियों से अलंकृत सिद्धहस्त, लोकप्रिय लेखक पण्डित रतनचंद भारिल्ल की संवाद शैली में लिखी गई 'जम्बू से जम्बूस्वामी' कृति का तीन माह की अल्पावधि में ही द्वितीय संस्करण प्रकाशित करते हुए मुझे हार्दिक प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है।

पाठकों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि अध्यात्म भावों से भरपूर वैराग्य प्रेरक प्रस्तुत कृति अत्यन्त सरल, सुबोध भाषा-शैली में लिखी गई है। लघुकाय होते हुए भी यह कृति जम्बूस्वामी से सम्बन्धित सर्वांगीण विषयवस्तु को अपने में समेटे हुए है।

जम्बूकुमार और उनकी पत्नियों के बीच हुई वार्ता राग-विराग की गंगा-जमुनी धारा के रूप में जो प्रवाहित हुई, वह तो बारम्बार पठनीय है ही, जम्बूकुमार और विद्युच्चर के बीच हुए संवाद से भी पाठक निःसंदेह प्रभावित होंगे।

जम्बूस्वामी की देशना भूमि सिद्धक्षेत्र मथुरा में १००८ भगवान जम्बूस्वामी की प्रतिमा के पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव के मंगल अवसर पर प्रकाशित होने से इस कृति की उपयोगिता और अधिक बढ़ जाती है।

प्रस्तुत कृति को भगवान जम्बूस्वामी के चरणों में अर्घ्य के रूप में समर्पित करते हुए पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट अपनी भक्ति भावना व्यक्त करते हुए गौरवान्वित है।

प्रस्तुत कृति के लेखक के प्रति तो ट्रस्ट आभारी है ही, प्रकाशन व्यवस्था में सहयोगी अखिल बंसल एवं टाइप सैटिंग के लिए कैलाश शर्मा भी धन्यवादार्ह हैं।

ब्र. यशपाल जैन, एम.ए.
प्रकाशन मंत्री
पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर

लेखक के अन्य महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

मौलिक कृतियाँ	अब तक प्रकाशित प्रतियाँ	कीमत
०१. संस्कार (हिन्दी, मराठी, गुजराती)	५६ हजार ५००	२०.००
०२.विदाई की बेला (हिन्दी, मराठी, गुजराती)	८५ हजार	१२.००
०३. इन भावों का फल क्या होगा (हि. म., गु.)	५१ हजार	१८.००
०४. सुखी जीवन (हिन्दी) (नवीनतम कृति)	२३ हजार	१६.००
०५. णमोकार महामंत्र (हि., म., गु., क.)	६७ हजार ५००	६.००
०६. जिनपूजन रहस्य (हि.,म., गु., क.)	१ लाख ७९ हजार २००	४.००
०७. सामान्य श्रावकाचार (हि., म., गु.,क.)	७१ हजार २००	६.००
०८. पर से कुछ भी संबंध नहीं (हिन्दी)	१० हजार	७.००
०९. बालबोध पाठमाला भाग-१(हि.म.गु.क.त.अं.)	३ लाख ६६ हजार २००	२.५०
१०. क्षत्रचूड़ामणि परिशीलन (नवीनतम)	८ हजार	३.००
११. समयसार : मनीषियों की दृष्टि में (हिन्दी)	३ हजार	४.००
१२. द्रव्यदृष्टि (नवीन संस्करण)	५ हजार	५.००
१३. हरिवंश कथा (तीन संस्करण)	१३ हजार	३०.००
१४. षट्कारक अनुशीलन	३ हजार	४.००
१५. शलाका पुरुष पूर्वार्द्ध (दो संस्करण)	७ हजार	२५.००
१६. शलाका पुरुष उत्तरार्द्ध (प्रथम संस्करण)	५ हजार	३०.००
१७. ऐसे क्या पाप किए (तीन संस्करण)	११ हजार	१५.००
१८. नींव का पत्थर (उपन्यास)	११ हजार	१०.००
१९. पंचास्तिकाय (पद्यानुवाद)	५ हजार	३.००
२०. तीर्थंकर स्तवन	५ हजार	१.००
२१. साधना-समाधि और सिद्धि	२ हजार	४.००
२२. ये तो सोचा ही नहीं	८ हजार	१६.००
२३. जिन खोजा तिन पाइयाँ	३ हजार	१०.००
२४. यदि चूक गये तो	३ हजार	१२.००
२५. समाधि और सल्लेखना	३ हजार	६.००
२६. चलते फिरते सिद्धों से गुरु	५ हजार	१६.००
२७. जम्बू से जम्बूस्वामी	१ हजार	६.००
सम्पादित कृतियाँ		
२८. सम्यग्दर्शन प्रवचन	३ हजार	१५.००
२९. भक्तामर प्रवचन	३५ हजार ४००	१५.००
३०. समाधिशतक प्रवचन	३ हजार	२०.००
३१. पदार्थ विज्ञान (प्रवचनसार गाथा ९९ से १०२)	८ हजार २००	५.००
३२. गागर में सागर (प्रवचन)	२३ हजार ६००	७.००
३३. अहिंसा : महावीर की दृष्टि में	१ लाख ४१ हजार	३.००
३४. गुणस्थान-विवेचन	२५ हजार ५००	२५.००
३५. अहिंसा के पथ पर (कहानी संग्रह)	२५ हजार २००	१२.००
३६. विचित्र महोत्सव (कहानी संग्रह)	९ हजार	१३.००

अनूदितः प्रवचनरत्नाकर भाग - १ से ११ तक (गुजराती से हिन्दी)
(समयसार प्रवचन)

प्रस्तावना

ह्न पण्डित रतनचन्द भारिल्ल

मथुरा नगर का प्राचीनकाल से ही धार्मिक, सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान रहा है। मथुरा वृन्दावन में जमुना नदी के तट पर हिन्दूधर्म का विश्व विख्यात तीर्थ स्थल हैं।

लीला पुरुषोत्तम नारायण श्रीकृष्ण की लीला स्थली होने से हिन्दू धर्म का महत्वपूर्ण धर्म स्थल तो मथुरा वृन्दावन है ही, मथुरा (चौरासी) अनेक दिगम्बर जैन मुनियों का मुक्ति स्थान होने से यह दिगम्बर जैन समाज का सिद्धक्षेत्र भी है।

इसके अतिरिक्त अन्तिम अनुबद्ध केवली जम्बूस्वामी की गंधकुटी (धर्मसभा) के विहार करते हुए चौरासी मथुरा में आने से एवं भव्य जीवों को तत्त्वोपदेश का लाभ मिलने से यहाँ के सिद्धक्षेत्र में और भी चार चाँद लग गये हैं।

ऐसे तद्‌भव मोक्षगामी महापुरुष जम्बूस्वामी के अन्तर-बाह्य व्यक्तित्व की महिमा में कुछ भी कहना/लिखना सूरज को दीपक दिखाने जैसा हास्यास्पद काम है; क्योंकि उनकी बहुआयामी व्यक्तित्व की महिमा को व्यक्त करने की सामर्थ्य मेरी वाणी एवं लेखनी में नहीं है, फिर भी भक्तिभाव वश मन लिखने को विवश है।

साथ ही यह भी विचार आया कि ह्न उनके बाल, किशोर एवं युवा जीवन के अनुपम, अप्रतिम व्यक्तित्व से, उनके आदर्श जीवन से, जीवन में घटी अद्‌भुत घटनाओं से पाठक कुछ प्रेरणा ले सकें; एतदर्थ जो कुछ भी कहा जा सके/लिखा जा सके; अवश्य कहना/लिखना चाहिए। यह सोचकर हृदय में कुछ लिखने का भाव उमड़ा है।

मैं न तो इतिहास का विशेषज्ञ विद्वान हूँ और न मुझे स्वभावतः उसमें

रुचि है, इसी कारण उसमें मेरी गति भी नहीं है। अतः मैंने अनुबद्ध केवली जम्बूस्वामी के विषय में भी इतिहास के दृष्टिकोण से नहीं; बल्कि आध्यात्मिक और नैतिक महत्व की दृष्टि से ही लिखने का प्रयास किया है।

सन् २००८ फरवरी में जम्बूस्वामी की विशाल काय प्रतिमा के पंचकल्याणक महोत्सव के पावन प्रसंग पर मैंने प्रस्तुत कृति को लिखकर भगवान जम्बूस्वामी के प्रति अपनी भक्तिभावनाञ्जलि अर्पित की है। आशा है पाठकों को पसंद आयेगी।

मैंने संवादशैली में मूल कथानक में आये पौराणिक पात्रों के द्वारा ही ऐसी चर्चा-वार्ता कराई है, जिससे पाठकों को जम्बूस्वामी के जीवनवृत्त एवं उनके द्वारा हुई तात्त्विक वार्ता को समझने में तो सुगमता रहे ही; धार्मिक, आध्यात्मिक और नैतिक जीवन जीने की प्रेरणा भी मिले।

मेरा विनम्र अनुरोध है कि इस कृति को इसी दृष्टिकोण से देखा/परखा और पढ़ा जाना चाहिए।

ह्न ह्न ह्न ह्न

जम्बूस्वामी का मोक्ष कहाँ से हुआ है? यह ऐतिहासिक दृष्टि से शोध-खोज का विषय है। इस विषय के विशेषज्ञ इस दिशा में भी सक्रिय होंगे ही।

जम्बूस्वामी का बाल्यकाल से लेकर यौवन तक का पारिवारिक और अध्यात्म चिन्तनपरक जीवन भी ऐसा आदर्श एवं अनुकरणीय रहा, जिससे अनेक भव्य जीवों ने आत्मकल्याण की प्रेरणा ली और उनके साथ ही दीक्षित होकर सद्गति को प्राप्त हुए। इस कारण उनके बहुआयामी व्यक्तित्व पर भी बहुत सारा साहित्य लिखा गया है।

सभी साहित्यकार उनके मुक्ति स्थान पर तो एकमत हैं ही नहीं, उनके माता-पिता के नाम पर भी एक मत नहीं हैं। प्रासंगिक पात्र विद्युच्चर के नाम में भी साहित्यकारों के विभिन्न मत हैं।

ऐतिहासिक दृष्टि से इन सबका महत्व है; और शोध-खोज द्वारा इनके तल तक पहुँचने के पूरे प्रयत्न भी होने ही चाहिए, इसमें दो राय

नहीं; परन्तु फिर भी यदि किसी निर्णय पर न पहुँच सकें तो वे तथ्य मोक्षमार्ग में ऐसे प्रयोजनभूत भी नहीं कि जिनसे मोक्षमार्ग बाधित हो जाय।

ह्न ह्न ह्न ह्न

हिन्दी के प्रख्यात कवि भैया भगवती दास के हिन्दी भाषा में रचित निर्वाण काण्ड में मथुरा पुर के पवित्र उद्यान को जम्बूस्वामी का निर्वाण स्थल बताया गया है,[१] जबकि संस्कृत भाषा में रचित 'जम्बूस्वामी चरित्म्' में जम्बूस्वामी का केवलज्ञान कल्याणक एवं मोक्षकल्याणक विपुलाचल पर्वत पर हुए बताये गये हैं।[२]

यहाँ यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि जब दोनों कल्याणक विपुलाचल पर हुए तो फिर मथुरा चौरासी से उनका ऐसा क्या संबंध रहा कि जिसके कारण मथुरा के साथ उनका इतना घनिष्ट व गहरा जुड़ान हो गया।

इस शंका के समाधान हेतु सन् १९३६ में लिखी गई जम्बूस्वामी चरित्म् (संस्कृत) ग्रन्थ की प्रस्तावना पठनीय है। उसमें पण्डित जगदीशचंद शास्त्री बम्बई ने लिखा है कि ह्न ''मथुरा में अनुबद्ध केवली जम्बूस्वामी की धर्मसभा (गन्धकुटी) आई थी। वहाँ उनकी दिव्यध्वनि भी हुई। दिव्यध्वनि द्वारा तत्वोपदेश सुनकर भव्य जीव कृतार्थ हुए।

संभव है इसी से प्रभावित होकर वहाँ इनके भक्तों द्वारा स्तूपों का निर्माण हुआ हो।

जब आगरा निवासी साहू टोडरमल विक्रम सम्वत १६२२ के आस-पास सिद्धक्षेत्र मथुरा के दर्शनार्थ पहुँचे तो वहाँ पर बीच में जम्बूस्वामी का स्तूप (निःसहिस्थान) बना हुआ देखा। इसी स्तूप में नीचे उनके चरणों में मुनि विद्युच्चर की मूर्ति स्थापित थी साथ ही आजू-बाजू में अन्य अनेक मोक्षगामी मुनियों के स्तूप भी बने हुए थे।

१. मथुरापुर पवित्र उद्यान जम्बूस्वामी का निर्वाण ह्न जिनेन्द्र अर्चना, पृष्ठ-२२७
२.जम्बूस्वामी चरित्म कवि रायमल्ली विरचितः बारहवाँ पर्व पृष्ठ २१५, श्लोक ११०/११२

ये स्तूप कहीं पाँच, कहीं आठ, कहीं दस और कहीं बीस की संख्या में थे। इस तरह अनेक स्तूप बने हुए थे। साहू टोडरमल को इन जीर्ण-शीर्ण स्तूपों को देखकर इनके जीर्णोद्धार कराने की प्रबल भावना जागृत हुई फलस्वरूप उन्होंने उनका जीर्णोद्धार तो कराया ही, ५१४ नवीन स्तूपों का निर्माण भी कराया। इसमें उन्होंने उस समय लाखों रुपया खर्च किए।

इस बात से सिद्ध होता है कि जम्बूस्वामी के मोक्ष जाने के पूर्व से ही वहाँ से अनेक मुनि मोक्ष पधारे इसकारण मथुरा सिद्धक्षेत्र तो पहले से ही था। अनुबद्ध केवली जम्बूस्वामी के गन्धकुटी सहित मथुरा आने से जम्बूस्वामी का नाम विशेष रूप से मथुरा से जुड़ गया।

उसी समय में साहू टोडरमल ने कविवर रायमल्लजी से प्रार्थना की कि मुझे जम्बूस्वामी का चरित्र सुनना है। कविवर रायमल्लजी ने जम्बूस्वामी चरित्म की संस्कृत भाषा में रचना की, जो १६३२ में पूरी हुई। वह साहू टोडरमल के लिए ही की थी। उस समय आगरा में अकबर राजा का राज्य था।[१]

जम्बूस्वामी चरित्म की विषय वस्तु का संक्षिप्त सारांश इसप्रकार है ह्न ''सेठ अर्हद्दास के घर शिशु जम्बू का जन्म हुआ। शिशु जम्बू जन्मजात चरम शरीरी होने से सर्वगुण सम्पन्न तो थे ही, किशोरवय में भी उनकी एक-एक क्रिया अनुकरणीय थी। जब जम्बूकुमार युवा हुए, तब उनकी चार सेठों की चार कन्याओं से सगाई हुई। जम्बूकुमार ने मदोन्मत्त हाथी को वश में करके अपनी वीरता प्रगट की। उन्होंने एक बार रत्नचूल नामक विद्याधर को पराजित करके मृगांक विद्याधर की पुत्री का राजा श्रेणिक से विवाह कराने में सहायता की। तत्पश्चात् जम्बूकुमार को सुधर्माचार्य मुनि से अपने पूर्वभव सुनकर वैराग्य हुआ, तो उन्होंने मुनि होने की भावना व्यक्त की। सुधर्माचार्य ने माता-पिता से अनुमति लेने के

१. जम्बूस्वामी चरित्म - माणिकचन्द्र ग्रन्थमाला पुस्तक नं. ३५, प्रस्तावना, पृष्ठ-६

लिए भेजा। जम्बूकुमार ने माता-पिता से दीक्षा लेने की अनुमति माँगी। माता-पिता ने दीक्षा न लेने को बहुत समझाया, पर जम्बूकुमार हृदय से तो घर में रहने को सहमत नहीं हुए; फिर भी पिता की आज्ञा की अवहेलना न हो, मात्र इस कारण आज्ञा शिरोधार्य कर शादी तो कर ली; परन्तु शादी के बाद उसी रात में जब उनकी पत्नियों से प्रथम मिलन के समय प्रेमालाप के बजाय रातभर तत्त्वचर्चा एवं वैराग्यवर्द्धक वीतरागी वार्ता ही हुई, तो उसके फलस्वरूप प्रातः होते-होते वधुओं ने जम्बूस्वामी को मुनि दीक्षा लेने की सहर्ष अनुमति तो दे ही दी, स्वयं भी संयम धारण कर आत्म साधना करने को सहमत हो गई। माता-पिता ने भी संयम धारण कर लिया।

इसी समय विद्युच्चर भी उनके घर में चोरी का भाव लेकर आया और जुम्बूकुमार एवं वधुओं की वैराग्यरस से भरपूर चर्चावार्ता सुनकर संसार से विरक्त हो गया तथा चौर्यकर्म का त्याग करके जम्बूकुमार के साथ मुनि हो गया। अन्त में दोनों का विपुलाचल से निर्वाण हुआ।''

इसप्रकार हम देखते हैं कि सिद्धक्षेत्र मथुरा चौरासी प्राचीन काल से ही सिद्धक्षेत्र के रूप में ही प्रतिष्ठित है। जम्बूस्वामी के कारण उसकी महिमा में चार चाँद तो लग ही गये थे, वर्तमान में भगवान जम्बूस्वामी की 18 फुट उत्तंग विशालकाय पद्मासन प्रतिमा के स्थापित होने से अब इस सिद्धक्षेत्र की महिमा सहस्त्रगुणी हो गई है।

यह भव्य तीर्थ हजारों वर्ष तक इसी प्रकार भव्य जीवों को कल्याण का निमित्त/बनता रहे ह्न इसी मंगल भावना के साथ विराम।

●

ह्न प्राचार्य, श्री टोडरमल दिगम्बर जैन महाविद्यालय
ए-4, बापूनगर, जयपुर ह्न 302015

आत्मकथ्य

है अर्द्ध निशा विश्राम समय,
जम्बू वधुओं से बतियाते।
भेदज्ञान की चर्चा कर,
समकित सरिता में नहलाते।।१।।
शान्ति ही जिनकी राह रही,
समतामय है जिनका जीवन।
नाना विद्याओं के आलय,
वैराग्यमयी जिनका यौवन।।२।।
यौवन में जिनकी काम विजय,
जग को अद्‌भुत आदर्श रही।
अन्तिम अनुबद्ध केवली बन,
मुक्ति ही जिनकी साध्य रही।।३।।
जम्बू से जम्बूस्वामी तक,
शिवपथ यात्रा तुमने करके।
सन्मार्ग दिखाया शिवपथ का,
शिवपथगामी खुद बन करके।।४।।
हे जम्बूस्वामी! केवलज्ञानी,
आनन्द प्रदायक हों हमको।
जो मुक्तिमार्ग के दर्शक हैं,
श्रद्धा से वन्दन है उनको।।५।।

ह्न पण्डित रतनचन्द भारिल्ल

१

पिता अर्हद्‌दास और गर्भस्थ शिशु जम्बू

तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी की धर्मसभा (समवशरण) में देवों के कोठे में बैठे ब्रह्मोत्तर स्वर्ग के विद्युन्माली देव को देखकर पूर्व संस्कारवश राजा श्रेणिक के हृदय में सहज स्नेह उमड़ा और उन्हें ऐसा लगा कि यह कोई महान निकट भव्यात्मा है। इस कारण उन्हें यह जानने की जिज्ञासा हुई कि ह्न ''यह विद्युन्माली देव ब्रह्मोत्तर स्वर्ग से चयकर अगले जन्म में किस पुण्यवान नारी की कोख और गोद को पावन करेगा?'' राजा श्रेणिक ने ऐसा प्रश्न गौतम स्वामी से पूछा।

भगवान महावीर स्वामी के प्रमुख गणधर गौतम स्वामी ने राजा श्रेणिक द्वारा पूछे जाने पर उनकी जिज्ञासा को शान्त करते हुए कहा ह्न ''राजगृहनगर में धन-सम्पदा से सम्पन्न यथा नाम तथा गुण सम्पन्न जिनेन्द्र भक्त सेठ अर्हद्‌दास हैं। उनकी पत्नी जिनमती को इस भव्यात्मा को जन्म देने का सौभाग्य प्राप्त होगा।

यह विद्युन्माली और कोई नहीं, अन्तिम अनुबद्ध केवली जम्बूस्वामी का ही जीव है और यह विद्युन्माली देव अपने पिछले तीन भवों से स्व-संवेदन ज्ञान से ज्ञानामृत पान तो कर ही रहा है। भवदेव और शिवकुमार की मनुष्यपर्यायों में इसने मुनि होकर स्वरूपाचरण चारित्र की साधना करके अतीन्द्रिय आनन्द का भी भरपूर लाभ लिया है और अभी इस देव की पर्याय में भी इसे सम्यग्दर्शन रूप रत्न की उपलब्धि होने से अतीन्द्रिय आनन्द प्राप्त है।

यह अगले भव में ही राजगृही में सेठ अर्हद्‌दास के घर में जम्बूकुमार के रूप में जन्मेगा और उसी भव में अपनी आत्मसाधना पूर्ण कर

केवलज्ञानी होकर एवं जगत को धर्म का मार्ग प्रशस्त कर मुक्ति (रूपी) कन्या का वरण करेगा।''

ह्व ह्व ह्व

जिस समय गौतम स्वामी इस निकट भव्यात्मा जम्बूकुमार के पूर्वभवों पर एवं बालक जम्बू के जन्म पर प्रकाश डाल रहे थे, उसीसमय वहाँ एक यक्ष बैठा था। वह जम्बूस्वामी के बारे में हो रही महिमा मंडित चर्चा सुनकर आनन्द विभोर होकर नृत्य करने लगा और गौतम स्वामी से बोला ह्व ''आपके प्रसाद से जम्बूकुमार के केवली होने की बात सुनकर मैं कृतार्थ हो गया हूँ। वे माता-पिता धन्य हैं, जिनके घर में जम्बूकुमार जैसे पुत्र का जन्म होगा, जिनके आँगन में शिशु जम्बू की किलकारियाँ गूँजेंगी। वह नगर एवं नगरवासी धन्य होंगे, जहाँ जम्बूकुमार का किशोर जीवन बीतेगा। वे नारियाँ धन्य होंगी, जिनका विवाह युवक जम्बूकुमार से होगा और वे प्राणी धन्य होंगे, जो जम्बूस्वामी की दिव्यदेशना सुनकर अपना जीवन सफल करेंगे।''

इसप्रकार उस यक्ष को अपने स्थान पर खड़े होकर खूब उत्साह के साथ नृत्य करता देखकर राजा श्रेणिक एवं अन्य दर्शकों को यह जानने की जिज्ञासा हुई कि - यक्ष को इस प्रकार से उत्साहित होने का क्या कारण है? राजा श्रेणिक ने गौतम स्वामी से प्रश्न किया कि ह्व ''हे स्वामी! यह यक्ष कौन है? और इस यक्ष का इस प्रकार उत्साहित होकर नृत्य करने का रहस्य क्या है?

गौतम स्वामी ने अपने अवधिज्ञान से जानकर यह बताया कि ह्व ''इसी नगर में एक धनदत्त सेठ थे। उसकी पत्नी का नाम था गोत्रमती। उनके दो पुत्र हुए। बड़े पुत्र का नाम रखा अर्हद्दास और छोटे पुत्र का नाम रखा जिनदास।

अर्हद्दास तो यथानाम तथा गुण सम्पन्न है। वह अरहंत भगवान का सच्चा भक्त है और स्वभाव से गंभीर है; परन्तु उसका छोटा भाई का नाम

तो जिनदास था, पर जिनेन्द्र के दास होने जैसे उसमें एक भी लक्षण नहीं थे, बल्कि इसके विपरीत वह स्वभाव से बहुत उदण्ड था। दुर्भाग्य से धर्म से विमुख तो था ही, सातों व्यसनों का सेवन भी करने लगा था।

ह्व ह्व ह्व

देखो, परिणामों की विचित्रता! एक ही कोख से जन्में दोनों भाइयों की परिणति कैसी भिन्न-भिन्न थी। बड़ा भाई ऐसा धार्मिक, ऐसा गंभीर और छोटा ऐसा दुर्व्यसनी कि सारे नगर में उसकी बदनामी हुई, फिर भी उसने बदनामी की परवाह न करके जुआ खेला और उसमें सारी सम्पत्ति हार गया तब भी उसका मन नहीं माना और जीतने की आशा से उधार ले-ले कर जुआ खेलने से कर्जदार भी हो गया।

जब साथी जुआारियों द्वारा कर्जा वसूली का दबाव बढ़ा तो एक दिन वह इतना घबराया, इतना चिन्तित हुआ कि मूर्च्छित हो गया। संयोग से उसी समय अचानक उसका बड़ा भाई अर्हद्दास वहाँ जा पहुँचा। छोटे भाई को मूर्च्छित देख उसे उठाकर घर ले आया। वैद्यों से उपचार कराया। मूर्च्छा टूटने पर अर्हद्दास ने उसे जिनेन्द्रवाणी के बोधप्रद शब्दों से समझाया और कहा ह्व ''हे भाई! तूने जुआ व्यसन के कारण अपना सारा धन और यश ह्व सब कुछ तो खो ही दिया, अन्य दुर्व्यसनों में भी फँस गया।

जब जुए में हारा तो गम को भुलाने के लिए शराब पीना प्रारंभ कर दिया। शराब से हुई कामोत्तेजना के कारण वेश्यागामी हो गया, वेश्याओं के चपेट में आकर उन्हें धन से संतुष्ट रखने के लिये चोरी करने लगा। इस तरह एक ही दुर्व्यसन से, तू सभी दुर्व्यसनों में फँसता चला गया।

यह दुर्दशा अकेले तेरी नहीं हुई। जो भी किसी एक दुर्व्यसन में फँसता है; उसे अन्य सभी दुर्व्यसन स्वतः घेर ही लेते हैं। तुझे तो अब यह अनुभव स्वतः हो गया है, अतः इन्हें छोड़!

देखो, जो दूसरों की दुर्दशा देखकर उससे सबक सीख लेते हैं,

उसे नीतिकार उत्तम पुरुषों की श्रेणी में रखते हैं तथा एक बार ठोकर खाकर भुक्तभोगी होकर भी अन्त में सन्मार्ग में आ जाते हैं, उन्हें मध्यम कोटि की श्रेणी में रखा जाता है; किन्तु जो बार-बार ठोकर खाकर भी सुधर जाते, उन्हें अधम पुरुषों की श्रेणी में गिना जाता है। और जो बार-बार ठोकरें खाकर भी नहीं सुधरते उन्हें अधमाधम श्रेणी में रखा जाता है।

तुम प्रथम व द्वितीय श्रेणी में तो उत्तीर्ण नहीं हो पाये, अब यह अवसर खोने जैसा नहीं है, क्योंकि अब पुनः यह अवसर प्राप्त नहीं होगा।

हे अनुज! तुझे ज्ञात है कि मनुष्य जीवन पाना कितना कठिन है, कितना दुर्लभ है, फिर भी तू सन्मार्ग से भटक गया है। अस्तु ह्न अब तक जो कुछ हुआ सो हुआ अब भी चेत जा और शेष मानव जीवन सार्थक कर ले।''

अग्रज के उद्बोधन से और स्वयं की भली होनहार से जिनदास को अपने किए दुष्कर्मों का पश्चाताप हुआ और अपने अग्रज से बोला ह्न ''हे भाई! आप मेरे उपकारक हो, आपने मुझ जैसे अधम को सद्बोध देकर मुझे संसारसागर में डूबने से बचा लिया है। आप मेरे अग्रज तो हैं ही, अब मैं आपको अपना गुरु भी मानता हूँ।

अब मैं अपने समस्त दुर्व्यसनों का त्याग कर एवं जिनधर्म की शरण में रहकर अपने जिनदास नाम को सार्थक करूँगा। सच्चा जिनेन्द्र भक्त बनकर जिनाज्ञा का पालन करूँगा।''

तभी से जिनदास ने जिनेन्द्रदेव की आराधना और जिनवाणी का स्वाध्याय करके, ज्ञानस्वभावी आत्मा का निर्णय एवं आत्मानुभूति करके अपने अग्रज से ही श्रावक के व्रत लेकर उनका निरतिचार पालन करते हुए समाधिमरण पूर्वक देह छोड़ी और वही जिनदास इस यक्ष की पर्याय में आ गया है।

जब इसने यह सुना कि यह विद्युन्माली इन्द्र स्वर्ग से चयकर मेरे पूर्व पर्याय के अग्रज अर्हद्दास के घर में मेरी पूज्य भाभी जिनमती की कोख

से शिशु **जम्बू** के रूप में जन्म लेकर पूरे परिवार को धन्य करेगा तो इसका मनमयूर हर्ष से नृत्य करने लगा है।

यह प्रश्न राजा श्रेणिक ने गणधर गौतम स्वामी से पूछा था और गणधर देव ने उन्हें उत्तर दिया था इस बात का पता अन्य किसी को नहीं था।

ह्न ह्न ह्न ह्न

धर्मनिष्ठ सेठ अर्हद्दास एवं सेठानी जिनमती परस्पर स्नेह भाव से न्यायपूर्वक गृहस्थोचित धर्म-साधना करते हुए सुखपूर्वक रह रहे थे। उन्हें भी यह पता नहीं था कि हमारे आँगन में जम्बूकुमार के रूप में सूर्य के समान तेजस्वी पुत्ररत्न का जन्म होने वाला है।

जिनमती को शिशु के गर्भ में आने के लक्षणों से ऐसा अवश्य लगा कि मेरे गर्भ में कोई पुण्यवान जीव आ गया है। एक दिन जब उसने रात्रि के पिछले प्रहर में पाँच शुभ स्वप्न देखे तो जिज्ञासा हुई कि ऐसे अपूर्व स्वप्न क्यों आये?

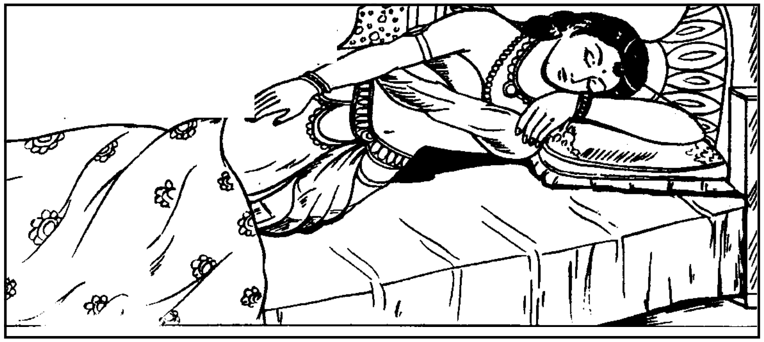

स्वप्न पूर्ण होते ही जिनमती जाग गई। वह मन ही मन शुभ स्वप्नों का कारण खोजने लगी ह्न क्या कोई दिव्य पुरुष मेरे गर्भ में आया है? प्रातः होते ही सेठानी ने सेठजी को अपने देखे स्वप्नों का वृत्तान्त सुनाकर उनके फल जानने की जिज्ञासा प्रगट की।

स्वप्नों को सुनते ही सेठजी का मन-मयूर हर्षित होकर नाच उठा। वे सेठानी सहित जिनमन्दिर गये, जिनेन्द्रदेव के भक्तिभाव से दर्शन-पूजन

करके वहाँ विराजित मुनिसंघ के दर्शन कर बैठ गये। ज्यों ही मुनिराज ध्यान करके निर्वृत्त हुए कि उन्होंने सेठानी द्वारा देखे स्वप्नों का फल जानने की प्रार्थना की।

मुनिसंघ के आचार्यश्री ने अवधिज्ञान से स्वप्नों का फल जानकर कहा ह्न ''पहला स्वप्न **जम्बू वृक्ष** का देखना इस बात का सूचक है कि तुम्हारे कामदेव जैसा सुन्दर तद्भव मोक्षगामी पुत्र होगा। दूसरा स्वप्न ह्न **धूम रहित अग्नि का देखना** इस बात का सूचक है कि ह्न वह कर्मरूप ईंधन को जलाने वाला होगा। तीसरा स्वप्न ह्न **धान्ययुक्त खेत** लक्ष्मीवान होने का सूचक है। चौथा स्वप्न ह्न **कमल सहित सरोवर** यह सूचित करता है कि वह पुत्र भव्य जीवों के हृदय कमल खिलाने वाला होगा। तथा पाँचवाँ स्वप्न ह्न **चंचल समुद्र** इस बात का सूचक है कि वह इसी भव में संसार समुद्र से पार होकर मुक्ति रूपी कन्या को वरेगा।

ह्न ह्न ह्न ह्न

जब विद्युन्माली देव का जीव जिनमती के गर्भ में आया तो जिनमती को ऐसे दोहले (भाव) हुए कि ''मैं देव-शास्त्र-गुरु की भक्तिभाव से पूजन करूँ, जिनबिम्बों की प्रतिष्ठा कराऊँ, चार संघों को चार प्रकार का दान दूँ, तीर्थक्षेत्रों की यात्रा करूँ आदि।''

माता जिनमती इच्छानुसार यथासंभव सभी कार्य करने भी लगी। उसे निज शुद्ध चैतन्यभाव के चिन्तन-मनन एवं रमण करने की भावना बलवती होने लगी।

माता-पिता के मन में चरम शरीरी अन्तिम केवली होने वाले अपने पुत्र को देखने की तीव्र भावना जागृत होने लगी। पुत्र के आगमन की सुखद प्रतीक्षा में नौ माह कब बीत गये, उन्हें इसका अनुभव ही नहीं हुआ। ●

२

जम्बू का जन्म, किशोर एवं यौवन काल

फाल्गुन माह के शुक्ल पक्ष में पूर्णिमा के शुभ दिन पूर्ण चन्द्र की भाँति कान्तिमान पुत्र का जन्म हुआ। पुत्र के आगमन से सेठ अर्हद्दास एवं सेठानी को अपार आनन्द का अनुभव हो रहा था। उन्होंने तो बड़े धूम-धाम से समस्त धार्मिक गतिविधियों के साथ पुत्र का अनुपम जन्मोत्सव मनाया ही, स्वर्ग में देवों ने भी दैवी पुष्पों एवं रत्नों की वर्षा की एवं दिव्यवादित्र बजाकर जन्मोत्सव मनाया।

पुत्र का व्यक्तित्व कितना भी बड़ा क्यों न हो, पर माता-पिता का तो आखिर प्रिय पुत्र ही है न! अतः माता-पिता ने बालक का नाम भले जम्बू कुमार रखा; पर लाड़-प्यार से वे बालक को **'जम्बू'** नाम से ही संबोधित किया करते। वृद्धिंगत शिशु की मुख की कान्ति चन्द्रकला के समान निरतंर बढ़ रही थी। मन्द-मन्द मुस्कान युक्त शिशु का मुख ऐसा लगता मानो खिला हुआ कमल पुष्प ही है।

सर्वत्र आनंददायक जय-जय की ध्वनियाँ होने लगीं। आनन्द विभोर हो नगर की नारियाँ मंगल गीत गा-गाकर हर्ष से नृत्य करने लगीं। सेठजी ने पात्रों को मनचाहा दान दिया।

ह्न ह्न ह्न ह्न

जब बालक किशोरावस्था में आया तो उसे सर्व विद्यायें स्वयं ही पूर्व-जन्म के संस्कार से स्मरण हो आईं। वह गुरुमुख से पढ़े बिना ही सर्व विद्याओं एवं कलाओं में पारंगत हो गया तथा बृहस्पती के समान सर्व शास्त्रों का ज्ञाता हो गया। वह चरमशरीरी तो था ही, जैसे-जैसे उसका शरीर वृद्धिंगत होता, वैसे-वैसे अन्य गुण भी वृद्धि को प्राप्त होते जाते।

जम्बूकुमार अतुल्य बलवान और असाधारण प्रज्ञावान तो बचपन से ही थे, अन्य सभी क्रियाकलापों में भी वे कुशल थे। चित्रकला, लेखन कला, छन्द-अलंकार आदि काव्यकला, गीत-वादित्र, वीणावादन आदि भी स्वयं ही करते तथा करतल ध्वनि के द्वारा मित्रों के उत्साह में वृद्धि किया करते।

इसतरह कुमार भगवान की भक्ति, पूजा, ध्यान और तत्त्व चर्चा भी करने लगे। जिस धर्मवृक्ष की शीतल छाया में तीर्थंकर, चक्रवर्ती, बलभद्र, नारायण, प्रतिनारायण आदि पदों की प्राप्ति होती है, उसी धर्मवृक्ष की शीतल छाया में रहने का परम सौभाग्य हमें अन्तिम केवली की छत्र छाया में प्राप्त हुआ है ह्न ऐसा सब अनुभव कर रहे थे।

जम्बूकुमार की सद्गुण सम्पत्ति, अतिशय रूप लावण्य, वज्रवत सुगठित सबल देह देखकर **अनेकों श्रीमन्तों के मन उन्हें अपनी कन्यायें देने को लालायित थे।** जिनमें सेठ सागरदत्त की कन्या **पद्मश्री,** धनदत्त की कन्या **कनकश्री,** वैश्रवण सेठ की कन्या **विनयश्री** और वणिकदत्त की कन्या **रूपश्री** के तो प्रस्ताव ही आ गये।

चारों ही श्रेष्ठियों ने जब यह शुभ विचार अपनी पत्नियों एवं पुत्रियों को सुनाये तो चारों ही पुत्रियों ने सलज्ज भाव से पैर के अँगूठों से जमीन खोदते हुए मन ही मन हर्षित होकर मौनरूप से सिर हिला कर अपनी-अपनी स्वीकृतियाँ दे दीं।

पद्मश्री, कनकश्री, विनयश्री एवं रूपश्री ह्न चारों ही कन्याओं की मौन स्वीकृति प्राप्त कर सेठ सागरदत्त, धनदत्त, वैश्रवण एवं वणिकदत्त ह्न चारों ही सेठों ने अर्हद्दास श्रेष्ठी के घर जाकर विनम्र प्रार्थना की कि ह्न ''हम अपनी कन्याओं का विवाह आपके पुत्र जम्बूकुमार से करने की स्वीकृति लेने आये हैं। आप हमारी प्रार्थना स्वीकार कर हमें कृतार्थ कीजिए।''

सेठ अर्हद्दास चारों ही श्रेष्ठियों की बात सुनकर अति प्रसन्न हुए और अपनी पत्नी जिनमती से परामर्श किया। जिनमती उन श्रेष्ठियों एवं कन्याओं से सुपरिचित थी अतः उसने सहर्ष अपनी सहमति दे दी।

माता-पिता को पुत्र के विवाह की इच्छा और प्रतीक्षा तो स्वाभाविक ही होती है, फिर योग्य और सर्वांग सुन्दर कन्याओं के मिल जाने पर तो उनके हर्ष का ठिकाना ही नहीं रहता।

चारों ही श्रेष्ठी अर्हद्दास से स्वीकृति पाकर अपने-अपने घर गये और पत्नियों एवं पुत्रियों को सुखद समाचार सुनाया तो उन्हें भी हार्दिक प्रसन्नता हुई। इस तरह दोनों पक्षों की ओर से विवाह की बात पक्की हो गई।

ह्न ह्न ह्न ह्न

बसन्त ऋतु का आगमन हुआ, कोयलें ऋतुराज के स्वागत में कूकने लगी। शीतल मन्द सुगन्ध बयार बहने लगी। ऐसी बसंत ऋतु में जम्बूकुमार मित्रों के साथ वन क्रीड़ा को गये थे। उसी समय नगरवासी भी सपत्नीक वन-उपवनों में क्रीड़ा हेतु पहुँचे थे। सरोवर में स्नान करके लोग हाथी, घोड़ों पर बैठकर अपने-अपने डेरों की ओर परस्पर बातचीत करते हुए लौट रहे थे। चारों ओर बाजों की गंभीर ध्वनियाँ हो रही थीं। इसतरह के कोलाहल से राजा श्रेणिक का हाथी भड़क गया और सांकल तोड़कर वन में स्वच्छन्द हो यत्र-तत्र घूमता हुआ उपद्रव करने लगा। सम्पूर्ण वन-उपवनों को छिन्न-भिन्न कर दिया।

सभी नगरवासी जो वनविहार से लौट रहे थे, वे उसकी भयंकर चिंघाड़ सुन भयभीत हो गये, भगदड़ मच गई। नागरिकों को भयभीत देख बलवान जम्बूकुमार ने उसकी सूँड एवं गर्दन ऐसी मजबूती से पकड़ ली, जिससे वह हाथी हिल भी नहीं सका। उस हाथी ने बहुत प्रयत्न किए किन्तु अन्ततः जम्बूकुमार को अजेय जानकर शान्त हो गया।

अन्य साधारण जन तो जम्बूकुमार की अचिंत्य शक्ति से प्रभावित हुए ही, नीति-निपुण राजा श्रेणिक भी आश्चर्यचकित हो गये। उन्होंने

जम्बूकुमार को अपने पास बुलाकर अपने साथ ही सिंहासन पर बिठाया, प्रेम से मस्तक पर हाथ फेरते हुए जम्बूकुमार की प्रशंसा करने लगे। प्रमुदित होकर बहुमूल्य रत्न आदि से सम्मान किया।

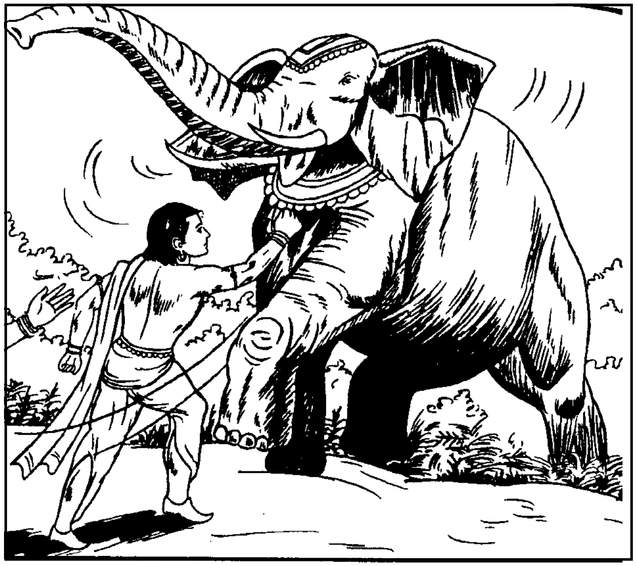

जिस हाथी को जम्बूकुमार ने वश में किया था, उसी हाथी के मस्तक पर कुमार को बैठाया गया और दुंदुभि बाजों की ध्वनि के साथ व सैकड़ों राजाओं के साथ जम्बूकुमार को नगर में प्रवेश कराया गया।

माता-पिता भी बड़े आदर के साथ पुत्र को घर लाए और उससे पूछा ह्न ''हे बेटा! तूने मेरू पर्वत समान हस्ती (हाथी) को कैसे वश में किया? तुझे कहीं कुछ चोट तो नहीं आई।''

जम्बूकुमार बोले ह्न ''नहीं माता नहीं! मुझे कुछ नहीं हुआ, मैं पूर्ण सकुशल हूँ।''

जम्बूकुमार जैसे बलवान एवं धैर्यवान मित्र को पाकर उनकी मित्र मंडली भी आनंदित हो जम्बू के पुण्य-प्रताप की सराहना करने लगी। हाथी को वश में करने के अतिरिक्त विद्याधर रत्नचूल जैसे अजेय बलवान विद्याधर को जीतने जैसी अनेक घटनायें घटीं, जो उनके बल, पराक्रम और साहस के प्रदर्शन के लिए पर्याप्त थीं। ●

३

जम्बूकुमार के पूर्वभव एवं रत्नचूल से युद्ध

''जो कम्मे सूरा ते धम्मे सूरा'' की नीति के अनुसार जम्बूकुमार ने किशोरवय में हाथी को तो वश में किया ही; धर्म के क्षेत्र में त्रिभुवन को अपने वश में करने वाले काम एवं महामोहमल्ल को भी पराजित करने के लिए कमर कस ली।

लौकिक युद्ध में भी यद्यपि अकेले जम्बूकुमार ने रत्नचूल जैसे पराक्रमी ससैन्य विद्याधर को चुटकियों में धराशायी कर दिया, तथापि उन्हें उसका किंचित् भी गर्व नहीं हुआ; क्योंकि वे यह जानते थे कि ह्न चरमशरीरी, वज्रवृषभनाराच संहनन के देहधारी मुझको ये कीट-पतंगों जैसे आकाश में उड़ने वाले विद्याधर भला कैसे जीत सकते हैं? और जो इसी भव में पूर्ण अहिंसक रीति से मोहमल्ल को पछाड़ने वाला है, कर्मशत्रुओं को जीतकर मुक्तिपुरी का राज्य प्राप्त करने वाला है, उसे हिंसक रीति से जीतकर प्राप्त होने वाले राज्यों से प्रयोजन ही क्या?

राजा श्रेणिक, सेनादल एवं विद्याधर ह्न सभी जम्बूकुमार के मुख से ही रत्नचूल के साथ हुए युद्ध में प्राप्त विजयश्री के समाचार सुनना चाहते थे, एतदर्थ उन्होंने जम्बूकुमार से निवेदन किया; परन्तु जम्बूकुमार मौन रहे, उन्होंने किसी से कुछ नहीं कहा।

राजा मृगांक ने जम्बूकुमार के प्रति आभार व्यक्त करते हुए उन्हें सम्मानित किया तथा राजा श्रेणिक से अपनी कन्या को पत्नी के रूप में स्वीकार करने का निवेदन किया। पश्चात् पाणिग्रहण संस्कार की सम्पूर्ण क्रिया राजशाही ठाट-बाठ से सम्पन्न हुई। अन्त में सभी को यथायोग सम्मान के साथ विदाई दी गई।

ह्न ह्न ह्न ह्न

जब राजगृही नगरी के उपवन में द्वितीय अनुबद्ध केवली सुधर्माचार्य का छद्मस्थ अवस्था में ससंघ आगमन हुआ तो यह समाचार ज्ञात होते ही राजा श्रेणिक तो अपनी नव विवाहिता पत्नी विशालवती एवं अन्य सभी रानियों के साथ आचार्यश्री के दर्शनार्थ वहाँ पहुँचे ही; श्रेष्ठीपुत्र जम्बूकुमार सहित नगर के अनेक जैन नागरिक भी वंदनार्थ वहाँ पहुँचे। सभी मुनिसंघ की वन्दना कर यथास्थान बैठ गये।

प्रातः नौ बज रहे थे, आचार्यश्री का उपदेश अभी-अभी प्रारंभ हुआ ही था, सभी ने एकाग्र चित्त से आचार्यश्री का प्रवचन सुना। तत्पश्चात् राजा श्रेणिक धर्मलाभ मिलने के लिए अपने भाग्य को सराहते हुए प्रजा के साथ घर वापिस आ गये; किन्तु विरक्त चित्त जम्बूकुमार गुरुओं के चरणों में ही बैठे रहे।

कुछ समय बाद वे ससंघ आचार्यश्री का गुणगान करते हुए बोले ह्न ''हे समदर्शी गुरुवर! हे वीतरागी विभो! मेरे मन में अनेक प्रश्न उठ रहे हैं। मैं आपके मुखारविन्द से विशेष सूक्ष्मता से जानना चाहता हूँ कि ह्न मैं कौन हूँ? मेरा क्या स्वरूप है? यह कौन सा पुण्योदय हुआ जो मुझे आप जैसे महान संतों के दर्शन एवं उपदेश सुनने का लाभ मिला है?''

सुधर्माचार्यश्री बोले ह्न **''हे भव्योत्तम! तुम स्वभाव से ज्ञानानन्दमयी, शाश्वत चैतन्य तत्त्व हो, तुम अनन्त शक्तियों एवं गुणों के भंडार हो। जगत का ज्ञाता-दृष्टा रहना ही तुम्हारा वास्तविक स्वरूप है। अपने त्रिकाली शाश्वत कारण परमात्मा का संवेदन करना ही तुम्हारा काम है। यह तो तुम्हारे द्रव्यस्वभाव का परिचय है, जिसके आलम्बन से तुम परमात्म पद प्राप्त करोगे।''**

रही बात कहाँ से आने की सो उसका संक्षिप्त परिचय यह है कि ह्न ''इसी मगध देश की वर्धमान नगरी में दो निकट भव्य सहोदर ब्राह्मणपुत्र थे, जिनके नाम भावदेव एवं भवदेव थे। उन दोनों ने शाश्वत सुखदायी जिनदीक्षा धारण कर ली और समाधिमरणपूर्वक देह त्यागकर वे तीसरे सनत्कुमार स्वर्ग में देव हुए। वहाँ की आयु पूर्ण कर भावदेव वज्रदन्त राजा

का सागरचन्द नामक पुत्र हुआ और भवदेव महापद्म चक्रवर्ती का शिवकुमार नाम का पुत्र हुआ। वहाँ भी वे दोनों जिनदीक्षा धारण कर उग्र तप कर समाधिमरण पूर्वक मरण कर छठवें ब्रह्मोत्तर स्वर्ग में विद्युन्माली देव हुए। वहाँ से च्युत होकर जो भावदेव का जीव भरत क्षेत्र के संवाहपुर के राजा सुप्रतिष्ठित का सुधर्म नाम का पुत्र हुआ। वह मैं स्वयं हूँ और भवदेव का जीव जो विद्युन्माली इन्द्र हुआ था, वह तुम स्वयं हो।''

सुधर्माचार्य आगे अपने पिता सुप्रतिष्ठित का परिचय देते हुए बोले ह्न ''मेरे पिता धर्मानुरागी सुप्रतिष्ठित राजा एक दिन अपनी पटरानी रूपवती (मेरी माँ) एवं पुत्र सुधर्म (मुझ) सहित भगवान महावीर प्रभु की वंदनार्थ समवशरण में गये। वहाँ भगवान की दिव्यध्वनि सुनकर मेरे पिता राजा सुप्रतिष्ठित ने संसार-शरीर एवं भोगों से विरक्त होकर अष्ट कर्मों की नाशक जैनेश्वरी दीक्षा धारण कर ली। ज्ञान-ध्यान में लीन, वैराग्य मूर्ति सुप्रतिष्ठित को द्वादशांग की अपूर्वलब्धियाँ प्रगट हो गईं और वे भगवान महावीर के चौथे गणधर बन गये।

ज्ञातव्य है कि सुधर्माचार्य भी महावीर स्वामी के पाँचवें गणधर थे।

ह्न ह्न ह्न ह्न

जब जम्बूकुमार रत्नचूल से युद्ध करते हुए नरसंहार के कारण मन ही मन पश्चाताप और अपनी निन्दा कर रहे थे, उसी समय बंधनग्रस्त रत्नचूल मन ही मन जम्बूकुमार की प्रशंसा कर रहा था। वह सोच रहा था कि ''दूसरे साधारण व्यक्ति तो दूसरों की सहायता से विजय प्राप्त करने पर भी अभिमान से उद्धत हो जाते हैं; किन्तु जम्बूकुमार ने बिना किसी की सहायता से अपने ही पराक्रम से मुझे परास्त कर विजय प्राप्त की, फिर भी निर्मद हैं।'' तभी और भी अनेक राजा जम्बूकुमार का गुणगान कर रहे थे।

उसी समय मृगांक का दूत व्योमगति विद्याधर अपने स्वामी राजा मृगांक को संबोधित करके बोल उठा ह्न ''हे स्वामी! आपने मदान्ध रत्नचूल को जीतकर अपनी यशपताका फहराई। मैंने आपकी वीरता की जैसी यशगाथा सुनी थी, वैसी ही आज प्रत्यक्ष देख ली है।''

विद्याधर मृगांक की झूठी प्रशंसा रत्नचूल को सहन नहीं हुई। वह क्रोधी होकर बोला ह्न "अरे! विद्याधर व्योमगति! तेरी इस मिथ्या प्रशंसा में एक शब्द भी तो सत्यांश नहीं है। वस्तुतः यह विजय जम्बूकुमार की है, तुम व्यर्थ ही श्रेय ले रहे हो। तुमने धीर-वीर-गंभीर जम्बूकुमार के बल पर ही यह विजय प्राप्त की है। तुम तो कायर हो! यदि तुम्हारी बाजुओं में दम हो तो अब पुनः युद्धस्थल में आ जाओ! मैं अभी ही तुम्हें यमलोक में पहुँचाता हूँ।"

जम्बूकुमार ने पहले तो रत्नचूल को समझाया, परन्तु जब वह मदान्ध रत्नचूल नहीं माना तो जम्बूकुमार ने उसे मृगांक से युद्ध करने के लिए बन्धन मुक्त कर दिया। संयोग से मृगांक परास्त हो गया तो रत्नचूल अपनी विजय मानकर मृगांक को कैद कर घर ले जाने लगा, तब जम्बूकुमार ने उसे रोकते हुए कहा ह्न "मैं मृगांक के साथ हूँ। मेरे रहते तू मृगांक को ले जाने की अनधिकृत चेष्टा मत कर! क्यों अपने ही हाथों मृत्यु को आमंत्रण दे रहा है? तू मुझसे परास्त है न! मैंने तुझे जैसा बन्धन से मुक्त किया है, वैसे ही मैं पुनः बाँध सकता हूँ।"

जोश में आकर रत्नचूल ने पुनः युद्ध करने के लिए कुमार को ललकारा तो जम्बूकुमार पहले तो असमंजस में पड़ गये; क्योंकि वे दयावान होने से यह नहीं चाहते थे कि पुनः युद्ध में व्यर्थ ही नरसंहार हो। इसकारण यद्यपि उनका हृदय द्रवित हो गया और वे युद्ध से विरक्त भी हुए; परन्तु रत्नचूल विद्याधर के मान का मर्दन करना उन्हें आवश्यक प्रतीत हुआ अतः उन्होंने कहा ह्न "शक्ति परीक्षा ही तो करना है, अतः क्यों न हम दोनों ही युद्ध कर अपनी शक्ति का परिचय दें। व्यर्थ में सेना का संहार क्यों करें?"

रत्नचूल तैयार हो गया। दोनों के बीच युद्ध हुआ। रत्नचूल के नागबाण को गरुड़बाण से तोड़ दिया तथा अग्निबाण को शीतल जल वर्षा बाण से शान्त कर दिया। रत्नचूल के तोमर शस्त्र को भी लीला मात्र में तोड़ डाला।

इसतरह जम्बूकुमार ने रत्नचूल को जीतकर एवं पुनः बन्धन में डालकर विद्याधर मृगांक को बन्धन मुक्त करा दिया। जम्बूकुमार को विजयश्री प्राप्त होने पर देवों ने भी खुशियाँ मनाईं।

राजा मृगांक जम्बूकुमार के द्वारा किये गये उपकार से उपकृत हो अनेक राजाओं एवं सभी प्रकार से यशोगान करते हुए जम्बूकुमार को हाथी पर बिठाकर केरल नगर में ले गये। वहाँ वीणा की ध्वनि के साथ जयगान हुए।

जम्बूकुमार की धीर-वीर-गुण गंभीर मुखमुद्रा को एवं अतुल्यबल को प्रत्यक्ष देखकर व्योमगति विद्याधर आनन्द से उछलने लगा। नगर की युवतियाँ झरोखों से जम्बूकुमार पर पुष्प वर्षा कर रही थीं। कोई उनकी शान्त मुद्रा को, कोई दयामयी भावों को तो कोई उनकी वैराग्य परिणति को निरख रहे थे। कोई अपने राज्य को, कोई अपने सौभाग्य को उनके संरक्षण में सुरक्षित जानकर प्रमुदित हो रहे थे। कोई उनके अद्भुत पराक्रम की, तो कोई उनके धैर्य की प्रशंसा कर रहे थे।

जब जम्बूकुमार ने केरल के राजमहल में प्रवेश किया तो राजा मृगांक की रानियाँ एवं कुमारियाँ उन्हें देखते ही दंग रह गईं। उनने जम्बूकुमार का रत्नचूर्ण से तिलक लगाकर स्वागत किया। जब राजा मृगांक स्वयं सेवक की भाँति जम्बूकुमार की सेवा में तत्पर था, उसी समय जम्बूकुमार मन ही मन देव-शास्त्र-गुरु का स्मरण कर रहे थे।

ह्न ह्न ह्न ह्न

कहते हैं धर्मआराधक कहीं भी कैसी भी परिस्थिति में हो, वह कभी अपने इष्टदेव की आराधना और स्मरण करना नहीं भूलता।

जिनालय में जिनेन्द्र पूजन, भोजन एवं विश्राम के बाद केरल के राजा मृगांक ने जम्बूकुमार को राजसभा में सिंहासन पर बिठाया तथा बन्धनबद्ध विद्याधर रत्नचूल को बन्धनमुक्त करते हुए मधुर वचनों से संबोधित कर संतुष्ट करते हुए कहा ह्न "हे विद्याधर! युद्ध में किसी एक की

जय हो तो दूसरे की पराजय तो होती ही है। इसमें क्षत्रिय हर्ष-विषाद नहीं करते।''

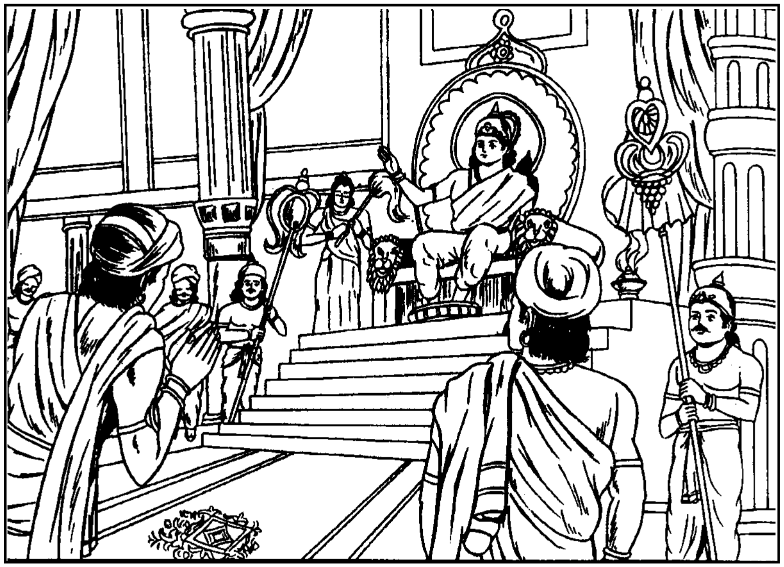

जम्बूकुमार ने रत्नचूल से कहा ह्व ''हे भ्रात! सांसारिक युद्धों की जीत में भी मनुष्य पर्याय की तो हार ही है। शारीरिक बल एवं पुण्य-प्रताप मुक्तिमार्ग में अकिंचित्कर हैं। मानव की असली जीत तो मोहमल्ल को जीतने में है। द्रव्य कर्म, भाव कर्म व नो कर्मों से भिन्न चैतन्य प्रभु की उपासना, कारण परमात्मा की आराधना से मुक्तिपुर का राज्य प्राप्त कर अनंत सुख प्राप्त करना ही सच्चा राज सुख प्राप्त करना है।

हे विद्याधर! केवलज्ञान विद्या को धारण करना ही सच्चा विद्याधरपना है, तुम उस विद्या को प्राप्त कर अनन्तकाल तक सुखी हो। यह मेरी मंगल कामना है।''

जम्बूकुमार के आत्महितकारी वचनामृत का पान कर रत्नचूल विनयपूर्वक बोला ह्व ''हे स्वामी! हे शूरवीर! मैं आपके साथ ही चलकर श्रावक शिरोमणि राजा श्रेणिक के दर्शन करना चाहता हूँ।'' रत्नचूल की

भावना देखकर जम्बूकुमार ने भी साधुवाद दिया।

मृगांक नृप ने अपने दूत व्योमगति विद्याधर को आदेश दिया ''आप विमान में बैठाकर जम्बूकुमार को उनके यथायोग्य स्थान पर पहुँचाइये। मृगांक के आदेशानुसार व्योमगति ने एक विमान से जम्बूकुमार और रत्नचूल को लेकर राजा श्रेणिक से मिलने के लिए प्रस्थान किया। दूसरे विमान में राजा मृगांक ने भी अपनी पत्नी एवं विशालवती कन्या को लेकर पाँच सौ योद्धाओं के साथ राजा श्रेणिक के पास जाने के लिए प्रस्थान किया।

जब जम्बूकुमार उन सभी विद्याधरों को साथ लेकर राजा श्रेणिक के पास पहुँचे तो राजा श्रेणिक जम्बूकुमार को अनेक राजाओं के साथ सदलबल आते देख सिंहासन से उठे और आदर के साथ जम्बूकुमार को हृदय से लगाते हुए बोले ह्व ''हे जम्बूकुमार! बहुत दिन हो जाने से मेरी आँखें तुम्हें देखने को तरस गई थीं। अब तुम्हें देखकर मेरा हृदय हर्ष से फूला नहीं समा रहा है।'' इसप्रकार बोलते हुए राजा श्रेणिक ने जम्बूकुमार को अपने निकट सिंहासन पर बिठा लिया।

राजा मृगांक के दूत विद्याधर व्योमगति ने खड़े होकर महाराजा श्रेणिक से सबका परिचय कराते हुए कहा ह्व ''यह राजा मृगांक हैं जो अपनी पुत्री विशालवती को आपसे ब्याहना चाहते हैं। यह राजा रत्नचूल है, जो अब तक अजेय थे, पर उन्हें जम्बूकुमार ने युद्ध में पराजित कर दिया है।'' राजा मृगांक जम्बूकुमार की बारंबार प्रशंसा करने लगे, क्योंकि जम्बूकुमार ने मृगांक की पुत्री विशालवती को रत्नचूल के चंगुल से मुक्त कराया था। **सज्जन पुरुष किए गये उपकार को कभी नहीं भूलते।**

तदुपरान्त राजा श्रेणिक ने राजा मृगांक और रत्नचूल के बीच मित्रता कराई। सब अतिथि राजा श्रेणिक से विदाई लेकर अपने-अपने घर प्रस्थान कर गये। व्योमगति विद्याधर भी अपने स्वामी राजा मृगांक के कार्य को सम्पन्न करा अपने घर लौट गया। ●

४

जम्बूकुमार द्वारा वैराग्यप्रद चिन्तवन

जम्बूकुमार ने दूसरों के द्वारा जवानी के जोश में कषायोंवश युद्धक्षेत्र में हुए प्राणिघात के भयानक दृश्य देखे एवं स्वयं से भी प्रमादवश रत्नचूल के साथ हुए युद्ध में हिंसक घटनायें हुईं। इस कारण वे पश्चाताप के सागर में डूब गये। वे सोचने लगे **''जैसे जल स्वभाव से तो शीतल ही होता है, पर वह अग्नि के संसर्ग से उष्ण होकर भी अपने स्वभाव को नहीं छोड़ता, उसीप्रकार आत्मा स्वभाव से तो शान्त ही है, परन्तु अपनी कमजोरीवश कषायों के कारण अशान्त हो जाता है, फिर भी उसका शांत स्वभाव नष्ट नहीं होता, इसीलिए ज्ञानी पुरुष दुर्गति के कारणभूत अज्ञान एवं क्रोध-मानादि कषायों को त्याग ही देते हैं। मैं भी भविष्य में ऐसी कोई भूल नहीं करूँगा, जिससे किसी को भी पीड़ा पहुँचे।**

जो अज्ञानी प्राणी इन्द्रियों के विषयों एवं कषायों में गाफिल हो जाते हैं, वे पतंगे की भाँति विषय-कषायों की ज्वाला में जल जाते हैं।

प्रथम तो पुण्योदय के बिना अनुकूल विषयों का मिलना ही दुर्लभ होता है, कदाचित् पुण्योदय से मिल भी जायें तो भी विषय भोगों की ज्वाला दिन दूनी-रात चौगुनी दहक-दहक कर जलाती ही रहती है।

निज स्वरूप को भूलकर अज्ञानी प्राणी पर को अपना मानकर एवं विषयों में सुख मानकर मृग-मरीचिका के समान विषयों के सन्मुख दौड़ते हैं।

इस मिथ्या अंधकार के नाश का एकमात्र उपाय देव-शास्त्र-गुरु के आलम्बन से वस्तु स्वातंत्र्य के सिद्धान्त को समझना और निजात्मा की आराधना करना ही है।''

जम्बूकुमार पुनः विचार करते हैं ह्न ''धिक्कार है इस शरीरबल को, धिक्कार है मेरी लौकिक चतुराई और युद्ध कौशल को जो व्यर्थ के पाप कार्यों में प्रवृत्त होता है।

तत्त्वज्ञान में निपुण होकर भी मेरी बुद्धि को क्या हो गया? जो मैं व्योमगति विद्याधर की बातों में आकर रत्नचूल के साथ युद्ध में प्रवृत्त हुआ, बिना प्रयोजन ही रत्नचूल और मृगांक के बीच में पड़ गया। अस्तु

जो होना था सो हो गया। अब बुद्धिपूर्वक ऐसी भूल की पुनरावृत्ति कभी नहीं करूँगा।

अभी ऐसा ही होना था सो ऐसा विचार बन गया। जैसी होनहार होती है, उसी दिशा में पुरुषार्थ होने लगता है। सहयोगी भी वैसे ही मिल जाते हैं। पर, यह युद्ध की सोच सही नहीं है, क्योंकि यह प्रवृत्ति राग-द्वेषजनक होने से संसार को ही बढ़ाने वाली है।''

केरल का राजा मृगांक, जो अपनी पुत्री विशालवती को महाराजा श्रेणिक को देना चाहता था। एतदर्थ उसने अपने दूत व्योमगति विद्याधर को श्रेणिक के पास भेजा था; परन्तु रास्ते में रोककर रत्नचूल विद्याधर ने मृगांक की कन्या विशालवती से स्वयं की शादी करने की बात कही। इस कारण जुम्बूकुमार ने न चाहते हुए भी मृगांक के और राजा श्रेणिक के पक्ष में व्योमगति को सहयोग देकर अजेय पराक्रमी विद्याधर रत्नचूल के साथ घमासान युद्धकर उसको खेल-खेल में जीत कर अपने साहस और धीरता-वीरता का जो परिचय दिया, उससे रत्नचूल तो प्रभावित हुआ ही, राजा श्रेणिक और राज मृगांक भी आश्चर्य चकित हुए तथा राजा मृगांक ने अपनी पुत्री विशालवती का विवाह उससे कर दिया।

ह्न ह्न ह्न ह्न

जम्बूकुमार ने सुधर्माचार्य की धर्मसभा में यह जानने की जिज्ञासा प्रगट की कि ह्न ''किस पुण्योदय से मुझे यह जिनधर्म जिनवाणी और आप जैसे सन्तों का समागम मिला है?''

आचार्यश्री ने कहा ह्न ''धर्मवत्सल! तुम्हारी पूर्व आराधनाओं का ही सुफल है; जिससे तुम्हें परम पावन करने वाला जिनधर्म मिला, जिनवाणी मिली और भव का अंत करने वाले वीतरागी संत मिले हैं।''

जम्बूकुमार में विगत पाँच भवों से धर्म के संस्कार तो थे ही, आत्मा की पहचान भी थी। अब जम्बूकुमार को जगत का जड़ वैभव भी तृणवत-

भासित होने लगा। उन्हें सारा संसार ही असार लगने लगा। उनका मन जिनदीक्षा के लिए तैयार हो गया। अतः वे गुरुवर सुधर्माचार्य के समक्ष जिनदीक्षा की प्रार्थना करने लगे।

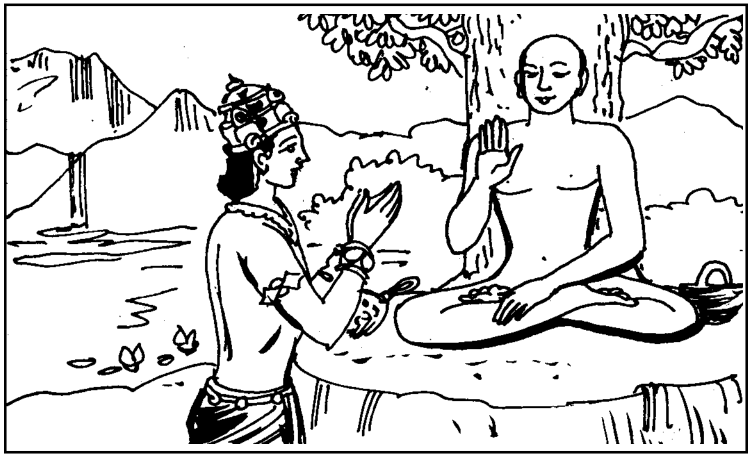

सौम्य, शान्त, वैराग्यमूर्ति चार ज्ञान के धारी श्री सुधर्माचार्य ने अवधिज्ञान से जम्बूकुमार को अति निकट भव्य जानकर कहा ''हे भव्य! यदि तुम्हें जिनदीक्षा लेने की तीव्र उत्कंठा है तो तुम अपने घर जाकर अपने माता-पिता एवं बंधुवर्ग से सहमति लेकर आओ उनके प्रति हुए ज्ञात-अज्ञात अपराधों की क्षमा कराके आओ।''

जम्बूकुमार मन में विचार करते हैं ह्न ''सर्वप्रथम तो आचार्यश्री की आज्ञानुसार घर जाना ही होगा, जो जिनदीक्षा लेने के पूर्व आवश्यक कर्तव्य हैं, उनकी पूर्ति किए बिना कोई जिनदीक्षा देने जैसा पावन कार्य क्यों करेगा?'' अतः उन्होंने घर की ओर प्रस्थान तो किया; पर वे मन में शीघ्र वापिस आने के संकल्प के साथ गये।

घर पहुँचकर संसार से विरक्त जम्बूकुमार उदास मन से एकान्त स्थान में बैठ गये। माता जिनमती तो पुत्र की विजय सुनकर हर्षित थी, किन्तु पुत्र को उदास देखकर उदासी का कारण कुछ समझ नहीं पायी। माँ ने पूछा ह्न ''बेटा! तुम उदास क्यों हो?''

जम्बूकुमार ने अपने सरल हृदय की सभी बातें माता को बता दीं।

उन्होंने कहा ह्न ''हे माँ! अब मुझे संसार असार लगने लगा है। मुझे ये सब भोगोपभोग त्याग कर जिनदीक्षा लेना है। अब मैं अपने पाणिपात्र में सहजभाव से प्राप्त आहार ही ग्रहण करूँगा और अतीन्द्रिय आनन्द में केलि करूँगा। संतों की शीतल छाया ही सच्ची सुखदायक है।''

पुत्र की बातें सुनकर माँ जिनमती मोह में मोहित होकर मुरझा गईं और आँखों से आँसू की धार बहाती हुई बोली ह्न ''बेटा! ऐसा क्या हुआ जो विजयश्री की प्रसन्नता के बदले सीधे जिनदीक्षा लेने की ठान ली है?

माँ के प्रश्न के उत्तर में जम्बूकुमार ने सुधर्माचार्य से सुना वैराग्योत्पादक उपदेश माँ को सुना दिया। उपदेश का सार सुनकर माँ जिनमती के अन्तर में भी धर्मभावना जागृत हो गई। माँ ने अपने चित्त को शान्त करके सेठ अर्हद्दास को भी सम्पूर्ण समाचार सुना दिये और कहा कि ''जम्बूकुमार चरमशरीरी है, अतः यह जिनदीक्षा लेना चाहता है।

सेठ अर्हद्दास यह समाचार सुनते ही मोहवश मूर्च्छित हो गये। जम्बूकुमार एवं सभी ने शीतल जल एवं पवन आदि के उपचार से उनकी मूर्च्छा दूर की तो वे हा-हाकार करने लगे। उससे सभी के हृदय द्रवित हो गये; किन्तु जम्बूकुमार पर उसका कुछ भी विपरीत प्रभाव नहीं पड़ा।

पिता ने जम्बूकुमार से कहा ह्न ''बेटा! जरा शान्ति से सभी बातों का विचार करो। देखो! व्रत-प्रतिज्ञा न लेने का अल्पदोष है; किन्तु व्रत ग्रहण कर फिर छोड़ना, व्रत भंग होना महापाप का कारण है। यद्यपि मुक्ति पाने के लिए मुनि होना तो अनिवार्य ही है; क्योंकि मुनि हुए बिना तो आठों कर्मों का अभाव ही नहीं होता और आठों कर्मों के अभाव बिना मुक्ति पाना संभव नहीं है, यह मैं जानता हूँ; परन्तु पहले घर में ही रहकर देशव्रत पालन करने का अभ्यास करो, फिर महाव्रत अंगीकार करना यही क्रम आचार्यों ने भी बताया है।''

जम्बूकुमार पिता के वचनों को सुनकर विचार कर रहे थे कि ह्न ''जगत को जिनदीक्षा लेना भले ही कठिन लगे; परन्तु मैं तो पिछले दो भवों से मुनिव्रत धारण कर अतीन्द्रिय आनन्द का रसपान करता आ रहा हूँ। अतः मेरे लिए यह कोई नया, असाध्य एवं कठिन कार्य नहीं है।''

यह विचार कर जम्बूकुमार ने पिताश्री से कहा ह्न ''हे पिता! बाह्य वस्तुएँ सुख-दुःख की कारण नहीं होती। अतीन्द्रिय आनन्द में रमने वालों को क्या उपसर्ग और क्या परीषह! अतः हे तात! आप मेरे प्रति मोह को छोड़ मेरे वीतरागी पथ पर अग्रसर होने की अनुमोदना कीजिए, मुझे मुनिधर्म धारण करने की आज्ञा दीजिए।''

जम्बूकुमार को मुक्तिमार्ग में दृढ़ जानकर अर्हद्दास सेठ ने अपने मन को शान्त किया और एक चतुर सेवक से कहा ह्न ''तुम शीघ्र जाकर सागरदत्त आदि चारों श्रेष्ठी जनों को यह समाचार देकर कहो कि ह्न जम्बूकुमार संसार से विरक्त हो जाने के कारण जिनदीक्षा लेने को तैयार है। अतः अब आपकी कन्याओं के विवाह संभव नहीं है।''

सेवक सागरदत्त सेठ के सन्मुख जाकर नीचे मुँह लटकाकर खड़ा हो गया। सागरदत्त ने सेवक को इस प्रकार उदास भाव से खड़ा देखकर कारण पूछा। उत्तर में सेवक ने निराशा का भाव व्यक्त करते हुए जम्बूकुमार के वैराग्य का समाचार सुनाया और कहा कि ह्न ''अब आपकी पुत्रियों के विवाह की संभावना नहीं है।''

सागर दत्त ने कहा ह्न ''अरे सेवक! यह क्या कह रहे हो?''

सेवक से सब कुछ जानकारी लेने के बाद सागरदत्त ने ये दुःखद समाचार अन्य तीनों श्रेष्ठियों को भी भिजवा दिए। तीनों सेठ सागरदत्त के पास आ गये और चारों सेठ सोच में पड़ गये। अब क्या किया जाय?

धनदत्त ने कहा ह्न ''क्यों न हम सब जम्बूकुमार के पास चलकर उन्हें ही समझायें? उन्हीं से अनुनय विनय करें।''

सागरदत्त ने कहा ह्न '' जब माता-पिता के ही सब प्रयास विफल हो गये तो हम चलकर क्या करेंगे? क्या चरमशरीरी व्यक्ति के वैराग्य को भी बदला जा सकता है? मुझे तो यह सब असंभव लगता है। फिर इस मंगलमय भावों की तो हमें भी अनुमोदना ही करना चाहिए।''

सागरदत्त के ऐसे विचार सुनकर अन्य तीनों श्रेष्ठी जन दुःखित मन से दीर्घ श्वांस छोड़ते हुए बोले ह्न ''यदि कुमार कुछ काल संसार में रुककर हमारी पुत्रियों के सौभाग्य तिलक बनते तो कितना अच्छा होता।''

ऐसा कहते-कहते उनकी आँखों से आँसू आ गये।

सेठ सागरदत्त उन्हें धीरज बँधाते हुए बोले ह्न ''होनहार के आगे किसका वश चला है? अतः शोक छोड़कर पुत्रियों के हित में जो संभव हो वह करो।''

चारों श्रेष्ठियों ने सबसे पहले तो यह विचार किया कि पहले तो पुत्रियों को सान्त्वना देते हुए यह अप्रिय समाचार सुनाया जायें कि जम्बूकुमार विवाह करने को राजी नहीं हैं।

सेठ सागरदत्त ने सबकी सम्मति से पुत्रियों एवं उनकी माताओं को बुलाकर सीधे समाचार न सुनाकर उपदेश की भाषा में कहा ह्न ''हे पुत्रियों! तुम सभी ने आर्यिका माताजी के सान्निध्य में संसार के स्वरूप को और वस्तुस्वभाव को समझा है, प्रत्येक वस्तु नित्य रहकर भी प्रतिपल पलटती रहती है। प्राणियों के परिणामों में भी कभी मन्दता, कभी तीव्रता, कभी रागरूप तो कभी वीतराग रूप परिणमन होता है। यह जानकर विवेकीजन इष्टवियोग-अनिष्टसंयोग में हर्ष-विषाद नहीं करते।''

पद्मश्री ने कहा ह्न ''हे तात! अकस्मात् इसप्रकार वस्तुस्वरूप का उपदेश क्यों दिया जा रहा है? अभी कोई स्वाध्याय का समय अथवा तत्त्व प्रतिपादन का प्रसंग तो है नहीं। इससमय यह सब वार्ता करने का क्या प्रयोजन है? क्या श्रेष्ठी पुत्र जम्बूकुमार ने दूत के द्वारा कोई नया अनहोना संदेश भेजा है?''

धनदत्त श्रेष्ठी ने कहा ह्न ''हे पुत्रियों! जम्बूकुमार ने अपने माता-पिता के द्वारा अनेक प्रकार से समझाये जाने पर भी विवाह के राग-रंग में फँसने से मना कर दिया है और उन्होंने मुनि होने का निर्णय ले लिया है। यद्यपि समाचार शुभ है; परंतु अपने लिए इष्ट नहीं है। अतः तुम इस कर्ण-कटु अप्रिय समाचार से व्यथित न हों। हम सभी एक बार पुनः कुमार से मिलकर विवाह करने का अनुरोध करेंगे।''

इतना सुनते ही पद्मश्री की माँ पद्मावती रुदन करने लगी।

सागरदत्त ने समझाया ह्न ''प्रिये पद्मावती! तुम दुःखी न हो। धैर्य धारण करो एवं पुत्रियों को धैर्य बँधाओ। प्रथम तो जम्बूकुमार को ही

राजी करने का ही प्रयास करते हैं, फिर भी यदि जम्बूकुमार विवाह करने को तैयार नहीं होंगे तो अन्य योग्य वरों की तलाश करेंगे।''

सागरदत्त के द्वारा इसप्रकार के समाचारों एवं आश्वासनों को सुनते ही चारों कन्यायें एकदम बोली ह्न ''हे तात! हम सभी ने मन ही मन यह निश्चय कर लिया है कि हमारे पति तो अब जम्बूकुमार ही हैं। अन्य को तो हम स्वप्न में भी स्वीकार नहीं कर सकती; क्योंकि जिसको हमारे मन ने एक बार अपने पति के रूप में मान लिया है, स्वीकार कर लिया है; उस मन में अब अन्य कोई व्यक्ति पति का स्थान नहीं पा सकता। यदि जम्बूकुमार विवाह करने से मना करके मुक्तिपथ पर अग्रसर होंगे तो हम चारों भी उन्हीं का अनुसरण करेंगी।''

अपनी पुत्रियों के दृढ़ निश्चय को जानकर चारों ही श्रेष्ठी जम्बूकुमार के पिता अर्हद्दास के पास पहुँचे और अपनी पुत्रियों के विचारों से उन्हें अवगत कराते हुए बोले ह्न ''हे मित्र! कुमार के मन में अचानक ऐसी विरक्ति आने का क्या कारण है? उन्होंने इतनी लघुवय में इतना कठोर कदम क्यों उठाया? यद्यपि अन्तिम लक्ष्य सबका यही होना चाहिए। हम भी इस बात से पूर्ण सहमत हैं, परन्तु शादी करके कुछ दिन गृहस्थ जीवन में रहकर धीरे-धीरे शक्ति के अनुसार मोक्षमार्ग में कदम बढ़ायें तो अति उत्तम होगा।''

अर्हद्दास ने कहा ह्न ''हे मित्रों! इस परिस्थिति में आप लोगों का यह सोचना और कहना सर्वोत्तम है। हम भी आप लोगों के विचारों से पूर्ण सहमत हैं, एतदर्थ हमने भी उन्हें समझाने में अपनी पूरी शक्ति लगा ली; परन्तु कुमार अपने दृढ़ निश्चय से टस से मस होने को तैयार ही नहीं है। अतः हम विवश हो गये हैं।

कुमार की विरक्ति के प्रसंग में बात इसप्रकार बनी कि ह्न कुमार जब केरल के युद्ध से वापिस अपने नगर आये तो उन्होंने नगर के उपवन में पूज्य श्री सुधर्माचार्य से संसार, शरीर और भोगों की असारता का स्वरूप सुना तथा युद्ध में हुए नरसंहार को अपनी आँखों से देखा और उन्हें उस हिंसक युद्ध में सम्मलित भी होना पड़ा। इस कारण उनका मन सांसारिक सुखों से सर्वथा विरक्त हो गया है। फिर भी प्रयत्न करते हैं। देखें फिर क्या होता है।''

●

५

जम्बूकुमार और उनकी चारों पत्नियों का संवाद

वैराग्यरस में सराबोर मुक्तिकान्ता के अभिलाषी को सांसारिक भोगों की आकांक्षा लेशमात्र न होने पर भी माता-पिता के अति आग्रह पर जम्बूकुमार ने उदास मन से शादी के लिए मौन स्वीकृति प्रदान कर दी।

अर्हद्दास को एक ओर तो कुमार का विवाह न कराने का इरादा, विवाह के प्रति अरुचि एवं अनुत्साह दिख रहा था और दूसरी ओर उन्हें उन कन्याओं के सौन्दर्य एवं व्यवहार-कुशलता के कारण ऐसा लग रहा था कि संभव है इनके अन्तर्बाह्य आकर्षक व्यक्तित्व के कारण कुमार कुछ काल तक रुक जायें। अतः प्रसन्नतापूर्वक तत्क्षण विवाहोत्सव की तैयारियाँ करना प्रारंभ कर दिया तथा शुभ लग्न देखकर समस्त इष्टजनों एवं पंच-परमेष्ठियों की साक्षीपूर्वक कुमार का चारों सुकन्याओं के साथ यथाशीघ्र विवाह सम्पन्न करा दिया गया। चारों श्रेष्ठियों ने वर-वधुओं का रत्नमयी अलंकारों से यथोचित सम्मान किया।

शादी के बाद कुमार की बारात अपने महल को लौटी। बारात आने पर वर के माता-पिता एवं इष्टजनों ने वर-वधुओं का द्वार पर मंगलगान गाते हुए रत्न-द्वीपों द्वारा स्वागत करते हुए उन्हें गृह-प्रवेश कराया।

जम्बूकुमार के माता-पिता द्वारा किमिच्छक दान दिया गया। वे पूर्ण आशान्वित थे कि ह्न इन चारों सुकन्याओं का रूप-लावण्य एवं व्यवहार कुशलता कुमार के चित्त को अवश्य हर लेगी। पुनः सशंकित होते हैं कि क्या सचमुच कुमार रुक जायेंगे? हे भगवान! कहीं ऐसा न हो कि कुमार चले जायें? क्योंकि वे जानते थे कि चरमशरीरी पुत्र के वैरागी चित्त को बदलना अत्यन्त कठिन है। उनका मन बारम्बार डोल रहा था। कभी तो

चिन्तित होते और कभी दोनों आपस में बातें करते हुए एक-दूसरे को धैर्य बँधाते।

ह्ल ह्ल ह्ल ह्ल

जम्बूकुमार के गृहस्थावस्था में प्रवेश करते हुए पत्नियों से प्रथम मिलन में ही जो वैराग्यवर्द्धक बातें हुईं, वे उन जैसे वैरागी व्यक्ति के लिए असंभावित नहीं थी। अधिकतर लोग जानते थे कि यह गृहस्थी लम्बे काल तक चलने वाली नहीं है। यह भी अनुमान लगाते थे कि संभवतः नया प्रभात कुछ ऐसा होगा, जो जम्बूकुमार के दर्शन जम्बूस्वामी के रूप में देगा और अन्ततः हुआ भी यही।

विवाहोपरांत घर वापिस आने के बाद इधर कुमार तो अपने महल के कक्ष में जाकर एकान्त स्थान में स्वरूप-आराधना के लिये प्रयत्नरत हो गये। उधर चारों वधुएँ महल के अपने-अपने निर्धारित कक्षों में पहुँचकर कुमार की प्रतीक्षा करने लगीं, परन्तु बहुत समय की प्रतीक्षा के बाद जब कुमार उनके कक्षों में नहीं पहुँचे तो चारों वधुओं ने सोचा कि कुमार के कक्ष में ही चलकर देखा जाये कि वे क्या कर रहे हैं? अब तक यहाँ क्यों नहीं आये?

वे कुमार के कक्ष में प्रवेश करती हैं और देखती हैं कि कुमार तो एक निःस्पृह योगी की तरह निश्चल बैठे हुए हैं। तब चारों वधुएँ वहाँ जाकर बैठ गईं तथा प्रणाम करते हुए बोली ह्ल ''हे स्वामी! आज के प्रथम मिलन के अवसर पर आपके रूठने का क्या कारण है? आप जरा नेत्र तो खोलिए। बोलिये स्वामी! कुछ तो बोलिये! हम आपके वचन सुनने के लिए व्याकुल हैं।

अत्यन्त आग्रह करने पर कुमार ने अर्द्धोन्मीलित नेत्रों से चारों वधुओं को ऐसे देखा जैसे कोई धर्मगुरु अपने शिष्यों को देखता है।

वे सोच रहे थे कि ह्ल ''प्रभातकाल में फलीभूत होने वाली मेरी भावनाओं से ये चारों पत्नियाँ अपरिचित हैं, अतः उनसे क्या कहा जाय? फिर भी वे बोले ह्ल ''मैं किसी से भी रूठा नहीं हूँ।''

तब चारों वधुएँ हाथ जोड़कर पूछती हैं ह्ल ''हे नाथ! यदि रूठे नहीं हैं तो फिर ऐसे अवसर पर ऐसी उदासी का क्या कारण है?''

कुमार को मौन देखकर वधुएँ पुनः बोलीं ह्ल ''हे स्वामिन्! हम सभी आपकी भावना जानना चाहती हैं।''

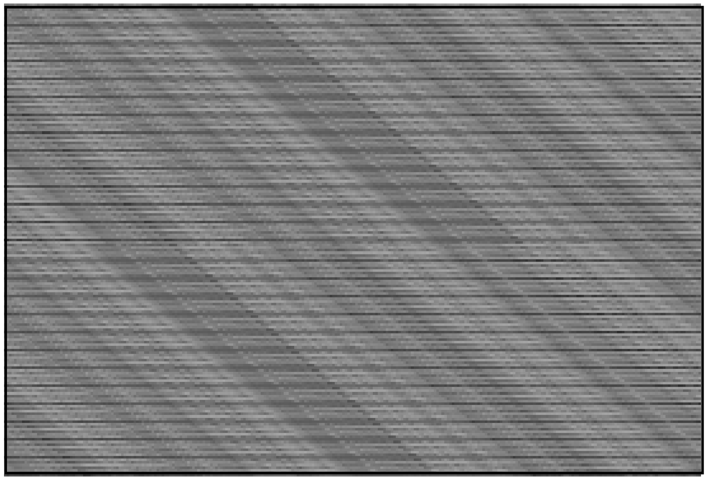

तब जम्बूकुमार बोले ह्ल ''हे देवियो! यह मानव भव वीतराग के पथ पर चलकर अतीन्द्रिय आनन्द का प्रचुर सम्वेदन करने एवं शीघ्रातिशीघ्र मुक्ति प्राप्त करने के लिए मिला है। अतः मैं यह भावना भा रहा हूँ कि अगला प्रभात मुझे प्रचुर स्वसम्वेदन के रूप में फलीभूत हो।''

बुद्धिमत्ता एवं रूपलावण्य में पगी हुई चारों वधुओं ने कुमार को रिझाने के लिये शृंगार रस गर्भित बातें कीं और कहा ह्ल ''हे नाथ! आप हमारे रूप-लावण्य को एक बार देखो तो सही, हमारे इन कोमल हाथों को स्पर्श करके तो देखो, हमारी मधुर वाणी को जरा सुनिये तो सही।''

परन्तु वैरागी कुमार तो नेत्र बन्द करके ऐसे शान्त बैठे रहे, मानो वधुओं की तरफ उनका लक्ष्य ही नहीं था।

अन्त में वे नवपरिणीता वधुएँ पुनः बोलीं ह्ल ''हे स्वामिन्! हम सभी ने आपको निहार कर ऐसा अनुभव किया कि मानो स्वामी के विशाल नेत्रों में चंचलता रहित अत्यन्त शान्त एवं गंभीर समुद्र लहरा रहा हो।

हे नाथ! हम सब आपको देखकर एवं आप जैसे धर्मात्मा का समागम